Introduction

प्राक्कथन

अध्ययन-अध्यापन के क्षेत्र में प्रवृत्त होने और अहिंदी भाषी प्रदेश में हिंदी का छात्र होने के नाते मुझे ऐसा लगा कि इस प्रदेश की हिन्दी परंपरा का अध्ययन करके इसे हिन्दी जगत के सन्मुख उपस्थित किया जाना चाहिए । सन् 1972 ई. में वड़ोदरा आने पर मुझे अपने गुरुजनों से मिलने का सौभाग्य प्राप्त हुआ । इसी सिलसिले में मैं डॉ. योगीन्द्र त्रिपाठी से मिला । उन्होंने ` अखो अने मध्यकालीन संत परंपरा ` नामक अपनी पुस्तक देते हुए मुझ से कहा- " इस पुस्तक में अखा की परंपरा में आनेवाले संतों का समीक्षीत अध्ययन प्रस्तुत किया गया है, जिसमें करुणासागर भी आते हैं । इनकी सभी रचनाएं मिश्रभाषा में उपलब्ध हैं । तुम्हें इनका विशेष अध्ययन करके हिंदी के विकास में इनके योगदान की चर्चा करनी चाहिए - ", और इन्होंने करुणासागर के सभी ग्रंथ मुझे दिये । मुझे इनका सुझाव जँचा और मैंने करुणासागर की रचनाओं का अध्ययन किया । अध्ययन के दौरान मुझे लगा कि करुणासागर की वाणी में कबीर का स्वर मुखरित है और अखा के बाद गुजरात के कबीर के रूप में इनकी गिनती हो सकती है । मैंने म. स. विश्वविद्यालय के हिन्दी विभाग के अध्यक्ष एवं मेरे गुरु आदरणीय डॉ. मदनगोपाल गुप्त से इस संबंध में बातचीत की और इनकी आज्ञा से मैंने हिंदी विभाग के प्रवक्ता डॉ. प्रतापनारायण झा के निर्देशन में अनुसंधान-कार्य का आरंभ किया ।

परंपरा पर अनुसंधान कार्य - आज तक गुजरात में हिन्दी के विकास पर कई अनुसंधान कार्य हो चुके हैं । श्री डाह्याभाई देरासरी, श्री जनकशंकर दवे, डॉ. अंबाशंकर नागर, डॉ. कुंजविहारी वार्ष्णेय, डॉ. नटवरलाल व्यास, डॉ. रामकुमार गुप्त, डॉ. मदनलाल जानी, डॉ. मालारविंदम् चतुर्वेदी, डॉ. रमणलाल पाठक आदि विद्वानों ने गुजरात की हिंदी परंपरा पर शोध-कार्य किया है, जिससे हिन्दी जगत गुजरात की अस्मिता से परिचित हो पाया है । इसके उपरांत गुजरात के हिंदी संत कवि-विशेष एवं उनकी विशिष्ट रचनाओं पर भी गहरा अनुसंधान

कार्य आचार्य चंद्रप्रकाश सिंह, डॉ. महोब्बतसिंह चौहान, डॉ. नरेश पंड्या, डॉ. रमणलाल पाठक, डॉ. कांतिलाल शाह आदि विद्वानों ने किया है ।

श्री देरासरी ने 45, डॉ. नागरजी ने 100 से अधिक, डॉ. व्यास ने 90 से अधिक और डॉ. गुप्त ने 85 कवियों का परिचय दिया है । डॉ. चतुर्वेदी ने परिशिष्ट में 348 कवियों का नामोल्लेख किया है । मेरे इस अनुसंधान कार्य में कालानुक्रम से 155 कवियों का परिचय, 43 कवियों का नामोल्लेख और परिशिष्ट में लगभग 70 कवियों का नामोल्लेख किया गया है ।

परंपरा को रेखांकित करने की इस दिशा में प्रस्तुत शोध-प्रबंध में उल्लिखित संत-कवियों के अंत्यजोद्धार, बाह्याचार-अंधश्रद्धा का विरोध आदि सामाजिक एवं धार्मिक सुधार कार्यों के साथ ही कबीर-अखा की विचारधारा की श्रृंखला को संकेतित किया गया है और खंडित कड़ियों को उचित स्थान पर रखने का नम्र प्रयास किया गया है ।

विषय का महत्त्व :-

भारत धर्म-प्राण देश रहा है । यह आज भी अपने आध्यात्मिक दर्शन, जीवन दर्शन, श्रेयस और प्रेयस के समन्वय, संस्कृति आदि के लिए प्रकाश-स्तंभ जैसा बना हुआ है । भारत की संस्कृति प्रारंभ से ही लचीली और समन्वयकारी रही है । ` चरैवेति ` इसका मूल मंत्र है । विभिन्न मत-मतान्तरों , विचारधाराओं, जीवन पद्धतियों आदि में समानता ढूँढने और जीवन के शाश्वत सत्य के साथ इनका मेल बिठाने का प्रयत्न इनकी विशेषता रही है । इसी विशेषता के कारण यह हमें सहिष्णुता, मानवता, विश्व बंधुत्व, आत्मा की अमरता आदि का संदेश देकर जीवन जीने की कला सिखाती है ।

भारतीय संस्कृति ने जहाँ देशकालानुसार अपने को परिवर्तित कर लिया है, वहीं इसने हमेशा व्यक्ति के संपूर्ण उन्नयन के साथ ही उसे संपूर्ण आध्यात्मिक एवं धार्मिक स्वतंत्रता भी प्रदान की है । इसी स्वतंत्रता के परिणामस्वरूप इस देश में ` सजातीय ` तथा ` विजातीय ` विद्रोह भी हुए और फलतः विभिन्न दर्शनों, मतों, वादों, संप्रदायों आदि का उद्भव संभव हो सका । इन सबके मूल में एक ही तत्त्व या पुरुषार्थ निहित है । यद्यपि विभिन्न संप्रदायों के

कार्यक्षेत्र भिन्न भिन्न हैं, फिर भी नर को नारायण बनाकर इसमें ईश्वरीय अधिष्ठान की उपलब्धि कराने का सामर्थ्य उत्पन्न करना इनका मूल लक्ष्य रहा है । समन्वय की और एक लक्ष्य की इसी उन्मुखता के महद भाव के आधार पर ही हम विश्व के वर्तमान संघर्ष में अपनी आस्तिकता, अस्मिता और निष्ठा के साथ खड़े रह सके हैं ।

भारतीय संस्कृति का विकास एक अविच्छिन्न प्रवाह के रूप में हुआ है । यदि गहराई में जाकर देखा जाय तो वेद, उपनिषद, पुराण, शंकराचार्य, रामानुजाचार्य, चैतन्य, कबीर, तुलसी, दयानंद सरस्वती आदि में एक ही सनातन तथ्य- सत्य देशकालानुसार विभिन्न रूप में विकासमान रहा है । यदि राष्ट्र का मानसिक, आध्यात्मिक और बौद्धिक स्वास्थ्य ठीक रखना है तो हमें इस विकास प्रवाह के विभिन्न भक्तों एवं संतों की उदार वैष्णवता एवं मानवता पर विचार करके उसे अपने समाज के अनुरूप बनाकर एक नया किन्तु दृढ़ मार्ग खोजना ही होगा । आलोच्य संत कवि करुणासागर भी इसी विकासमान परंपरा की एक मजबूत कड़ी हैं । इन्होंने तत्कालीन समाज को ध्यान में रखकर वन्य-प्रदेशों में भारतीय अस्मिता को जिलाये रखने का क्रियात्मक एवं कलात्मक कार्य किया है ।

आचार्य हजारीप्रसाद द्विवेदी ने ` आदिकाल के अंतर प्रांतीय साहित्य का ऐतिहासिक महत्त्व ` नामक अपने निबंध में कहा है कि आपको अगर हिंदी साहित्य का अध्ययन करना है तो उसके पड़ोसी साहित्यों को जाने बिना घाटे में रहेंगे । हमारे देश का सांस्कृतिक इतिहास इस मजबूती के साथ अदृश्य काल-विधाता के हाथों सी दिया गया है, ... उसे प्रांतीय सीमाओं में बाँधकर सोचा नहीं जा सकता । ..... इस ऐतिहासिक विकास को संस्कृत पोथियों से जाना नहीं जाता । इसको समझने का एक मात्र उत्तम मार्ग है वर्तमान देशी भाषाओं के प्राचीनतर साहित्य का अध्ययन । ..... इस देश की जनता को, उसके विश्वासों को, धर्म परिवर्तन के कारणों को समझने की सामग्री हमें मध्य-कालीन साहित्य में ही प्रचुर मात्रा में उपलब्ध होती है, जिसको जाने बिना हम भारतवर्ष को ठीक ठीक नहीं समझ पायेंगे । [1]

---

1 कल्पलता पृ.195-203.

आचार्य कुँवर चंद्रप्रकाशसिंह ने अखा को अपर कबीर माना है और दयाराम में बिहारी की कला को चुनौती देने की क्षमता को पाया है ।[1]

डॉ. मालारविंदम् चतुर्वेदी ने गुजरात के हिन्दी साहित्य का राष्ट्रीय महत्त्व बताते हुए उसके शुद्ध साहित्यिक महत्त्व का भी प्रतिपादन किया है ।[2]

विक्रमीय 19 वीं शती में करुणासागर ने भारतीय अस्मिता को न केवल समयानुसार जीवन प्रदान करने का ही कार्य किया, अपितु वन्य प्रदेशों के अंत्यजों में भी धार्मिक एवं आध्यात्मिक चेतना जागृत करने का भगीरथ कार्य भी किया है । तत्कालीन समाज में विधर्मियों द्वारा धर्म परिवर्तन की प्रवृत्तियाँ चलायी जा रही थीं उसे करुणासागर ने बड़ी कुशलता, उदारता एवं व्यावहारिकता के आधार पर न केवल कुंठित किया, बल्कि अपनी प्राचीन अस्मिता की ओर समाज को उन्मुख भी किया । यही कारण है कि सनातन धर्म और अध्यात्म की मूल प्रवृत्ति के आधार पर उसे जीवित रखने के लिए ` कायम पंथ ` का प्रादुर्भाव संभव हुआ हो । करुणासागर और उनके ` कायम पंथ ` का सामाजिक, धार्मिक एवं आध्यात्मिक महत्त्व इसीसे स्वतः सिद्ध है कि गुजरात में इस पंथ के 77 मंदिर हैं । मध्यप्रदेश और उत्तर प्रदेश में भी एक-एक मंदिर स्थापित हो चुके हैं जिनके द्वारा समूचे भारत वर्ष में आध्यात्मिक चेतना की स्त्रोतस्विनी तरंगायित हो रही है ।

इतने महत्त्वपूर्ण कवि एवं उनके पंथ पर अभी तक किसी भी अनुसंधित्सु ने विचार तक नहीं किया है । एक दो ग्रंथों में इनका थोड़ा सा परिचय अवश्य मिल जाता है, परन्तु इनके समग्र साहित्य के परिचय एवं उचित मूल्यांकन का प्रयत्न प्रथम बार ही प्रस्तुत शोध प्रबंध द्वारा किया जा रहा है । कबीर-अखा आदि ज्ञान-भक्ति मार्गी संत कवियों की परंपरा की मजबूत कड़ी के रूप में करुणासागर विद्यमान हैं, किंतु अभी तक ये उपेक्षित रहे हैं । इस शोध प्रबंध में उपेक्षा के इस कोहरे को भेदने का नम्र प्रयास किया गया है ।

---

1. महाराव लखपतिसिंह-व्यक्तित्व और साहित्यिक कृतित्व- डॉ. के.एम.शाह, भूमिका- पृ.5.
2. गुजरात की हिंदी काव्य परंपरा तथा आचार्य कवि गोविंद गिल्लाभाई, पृ.24.

गुजरात अपनी भौगोलिक, राजनैतिक, सामाजिक, धार्मिक, साहित्यिक, व्यापारिक आदि निजी विशेषताओं के कारण सदियों से हिंदी-भाषी प्रदेशों से जुड़ा हुआ रहा है । फलतः हिंदी साहित्य के पल्लवन का कार्य यहाँ प्रारंभ से ही होता रहा है । अतः बृहद हिंदी साहित्य की परिकल्पना के अनुसार इस प्रदेश के समूचे हिंदी साहित्य का अवगाहन आवश्यक ही नहीं, प्रत्युत अनिवार्य भी है । प्रस्तुत शोध प्रबंध उसीकी एक पूर्ति है ।

अपनी आर्थिक स्थिति की दृढ़ता, वैचारिक सहिष्णुता एवं सर्व-धर्म समभाव के कारण गुजरात को जितने धर्म, संप्रदाय और संत महात्माओं ने अपना कार्य-क्षेत्र बनाया उतना शायद अन्यत्र दुर्लभ है ।

प्रस्तुत शोध-प्रबंध में पहली बार करुणासागर एवं ` कायम पंथ ` के हिन्दी प्रदान को प्रकाश में लाया गया है और साथ ही उपलब्ध उन सभी कवियों का कालक्रमानुसार परिचय दिया गया है, जो इस विकास परंपरा की अभिन्न श्रृंखला में आबद्ध हैं । यह शोध-प्रबंध इन विभिन्न अभावों की पूर्ति के साथ ही भविष्य के अनुसंधाताओं के लिए मार्ग प्रशस्त करता है । इस संभावना को नकारा नहीं जा सकता कि गुजरात में अभी ऐसे कई संत एवं संप्रदाय होंगे जिनका हिंदी साहित्य काल की गर्त में सुषुप्तावस्था में होगा । प्रस्तुत शोध प्रबंध ऐसे अनुसंधान एवं शोध के नये क्षितिजों को उकेरता है ।

गुजरात में ` संतवाणी ` के अनेक संग्रह उपलब्ध हैं । कुछ संग्रह सांप्रदायिक संस्थाओं के द्वारा प्रकाशित हैं, जिनमें कहानवासे प्रकाशित ` संतोनी वाणी `, चित्रालसे प्रकाशित ` दीवाने सागर-दफ्तर ` 1,2 , पूणे से प्रकाशित ` रवि-भाण संप्रदायनी वाणी `, देथाण से प्रकाशित ` निरांत काव्य `, पेटलाद से प्रकाशित ` महात्यंम ज्ञान प्रकाश ग्रंथ `, सारसा से प्रकाशित ` भजन सागर ` भाग-1,2 आदि का समावेश होता है । इसके उपरांत सस्तु साहित्य वर्धक कार्यालय, अहमदाबाद, प्राचीन काव्यमाला तथा बृहद दोहन से भी संत साहित्य उपलब्ध हो पाया है ।

करुणासागर द्वारा रचित हंस तालेवा, अगाध बोध, स्वाचार पत्रिका,

विज्ञान सकृत मणिदीप आदि 18 ग्रंथ करुणासागर मंदिर, उमरा से प्रकाशित हुए हैं । इन ग्रंथों की हस्तलिपियाँ उमरा के मंदिर में सुरक्षित हैं । विभिन्न स्थानों पर स्थित करुणासागर मंदिरों के महंतों से संप्रदाय गत मान्यताओं को समझने में सहायता ली गयी है । प्रधान गुरुगादी सारसा के सप्तम कुवेराचार्य श्री अविचलदासजी से करुणासागर के जीवन एवं कवन संबंध में विस्तृत जानकारी उपलब्ध हो पायी है ।

अध्ययन की सुविधा के लिए उक्त शोध प्रबंध को सात अध्यायों में विभक्त किया गया है ।

गुजरात में हिंदी संत-काव्य परंपरा का विकास नामक प्रथम अध्याय में सर्व प्रथम उन कारणों पर विचार किया गया है जिनसे इस प्रदेश में हिंदी के प्रचार-प्रसार को बल मिला है । इनमें भौगोलिक, राजनीतिक, व्यापारिक, धार्मिक, साहित्यिक और भाषा संबंधी कारणों को दर्शाया गया है । इसके पश्चात् 155 कवियों का कालक्रमानुसार परिचय देते हुए उनकी विचारधारा को संकेतिक किया गया है । निष्कर्ष में यह बताया गया है कि इन संत कवियों की वाणी में सच्चे अर्थ में सार्ववर्णिकता, लोककल्याण की भावना और समयानुसार आध्यात्मिक दर्शन के मार्ग को सरल-सुलभ बनाने की भावना निहित थी ।

द्वितीय अध्याय का संबंध गुजरात में प्रवर्तित विभिन्न संप्रदायों से है । गुजरात में प्रारंभ से ही धार्मिक सहिष्णुता, उदारता और सर्वधर्म समभाव प्रवर्तित रहा है । इस कारण इस प्रदेश में जितने धार्मिक संप्रदायों को पश्रय मिला उतना शायद अन्यत्र नहीं । इन विभिन्न धार्मिक संप्रदायों की सबसे बड़ी विशेषता यह रही है कि ये अपने मतों के प्रतिपादन-प्रसार में तो लगे हुए हैं, किंतु मानवतावादी दृष्टिकोण के आधार पर सभी जनकल्याण की ओर उन्मुख हैं । इस अध्याय में उन तीस विभिन्न धार्मिक संप्रदायों का परिचय दिया गया है, जिन्होंने यहाँ के जनजीवन को प्रेरित एवं उत्साहित कर नयी दिशा प्रदान की है । इन सबने एक तत्त्व की महत्ता और उसकी अनुभूति पर अधिक बल दिया है ।

तृतीय अध्याय में आलोच्य कवि करुणासागर की जीवनी और व्यक्तित्व का परिचय दिया गया है । अंतर्बाह्य साक्ष्यों के आधार पर उन्हें परखने की कोशिश की गयी है । सांप्रदायिक मान्यताओं के आधार पर ये अयोनिज हैं और अलौकिक ढंग से इनका प्राकट्य विजयपुर [खोबली] के 'सेर' तालाब के किनारे माघ शुक्ल द्वितीया वि.स. 1829 को हुआ था । गुजरात के संत साहित्य पर लिखनेवाले हिंदी के विद्वानों ने भी इसी मान्यता को उल्लिखित किया है । इनके गुरु का नाम कृष्णस्वामी था । प्रचलित मान्यताओं के आधार पर ये महान विभूतियों में से थे और अवधूत के साथ ही आचार्य के व्यक्तित्व से भी मंडित थे । इनके व्यक्तित्व में अक्खड़पन, सुधारवादी दृष्टिकोण और हिन्दू-मुस्लिम एकता की स्थापना के साथ सर्वधर्म समभाव की चेतना निहित थी ।

करुणासागर की विभिन्न रचनाओं का परिचय चतुर्थ अध्याय की विषय-वस्तु है । इनकी कुल 18 रचनाएं उपलब्ध हैं । ये सभी रचनाएं उमरा के करुणासागर मंदिर से प्रकाशित हैं और वहीं पर इनकी हस्तलिखित प्रतियाँ भी विद्यमान हैं । करुणासागर प्रवचन करते और उनके दो लिपिक उनकी वाणी को लिपिबद्ध करते जाते । पांडुलिपियों के परीक्षण के बाद ऐसा प्रतीत होता है कि एक लिपिक मराठी भाषी रहा होगा और दूसरा गुजराती भाषी, क्योंकि इनकी लिखावट और हिज्जे में अंतर है । इस निरीक्षण-परीक्षण के पश्चात् विभिन्न ग्रंथों का परिचय दिया गया है । इन ग्रंथों में कवि ने जीव, जगत और ईश्वर के पारस्परिक संबंधों का निरूपण किया है । आवश्यकता पड़ने पर इन्होंने पौराणिक मान्यताओं का भी खंडन किया है । इनका मूल उद्देश्य समाजसुधार और आध्यात्मिक ज्ञान को सर्वजन सुलभ बनाना था, अतः इन्होंने व्यावहारिक और दैनन्दिन जीवन से विभिन्न उदाहरण और दृष्टांत लेकर अपनी बातें समझायी हैं । फलतः विभिन्न ग्रंथों में पुनरुक्तियाँ स्वाभाविक रूप से आ गयी है ।

पंचम अध्याय में करुणासागर की प्रधान कृतियों के आधार पर इनकी दार्शनिक विचारधार के सैद्धांतिक एवं साधनात्मक पक्षों का निरूपण किया गया है। संत साहित्य अपने समग्र रूप में प्रायः समन्वयपरक ही रहा है । कहना न

होगा कि ` एक ही ब्रह्म ` को विविध धर्म दर्शनशास्त्रों के प्रणेताओं, आचार्यों एवं गुरुओं ने अपने निजी किंवा विशिष्ट दृष्टिकोणों के आधार पर निरूपित करने का प्रयत्न किया है, चाहे वह वेद-वेदांत हो, श्रुति या औपनिषदिक ग्रंथ हो, चाहे शैव, वैष्णव या शाक्त ग्रंथ हो । इन सभी में अंततोगत्वा समन्वय की विराट चेष्टा का ही दृष्टिकोण मिलता है । हमारा संत साहित्य भी इनकी छाया या प्रभाव से असंपृक्त नहीं रह पाया है । इस दृष्टि से करुणासागर का समग्र साहित्य भी उसी ` एक ब्रह्म सत्ता ` और उसके जीव, जगत, मायादि सृष्ट्यात्मक तत्त्वों को अपने निजी दृष्टिकोण से देखते परखते हुए समन्वय मार्ग ही प्रस्तुत कर सका है । प्रस्तुत अध्याय में इसी आधार पर यह विवेचित करने का सुगम प्रयास किया गया है कि इनकी दार्शनिक विचारधारा अद्वैत-वेदांत की परंपरा से अनुस्यूत है । इनका कहना है कि ` सत कैवल ` तत्त्व से अतिरिक्त संसार में कुछ भी नहीं है, दृश्यमान विश्व ` सत कैवल ` से अभिन्न है । ` सत कैवल ` सगुण-निर्गुण से परे हैं । ` एकं सद विप्रा बहुधा वदन्ति ` की तरह इन्होंने परम तत्त्व को ` सत कैवल ` कहा है ।

षष्ठम अध्याय में आलोच्य कवि करुणासागर के भाव एवं कला पक्ष की समीक्षा की गयी है । कैवलपद प्राप्त करने के लिए अत्यावश्यक साधनों की आलोचना, जीव, जगत और ब्रह्म का निरूपण, सृष्टि की उत्पत्ति, जीव का कर्तव्य दंभी और ढोंगी गुरुओं के प्रति नफरत आदि की चर्चा करने में उपमा, रूपक, दृष्टांत आदि अलंकारों का विनियोग तत्त्व विचार को काव्य रूप देने में सफल हुआ है । इनकी स्वानुभूतिजन्य उत्कटता ही उनकी अभिव्यक्ति को कलात्मक रूप देती है । इनकी भाषा लक्ष्यवेधी, सचोट और धार्मिक है । इनका अनुयायी वर्ग अशिक्षित होने के कारण इन्होंने प्रसाद एवं माधुर्य युक्त भाषा का प्रयोग किया है । इन्होंने प्रतीक और स्मृति सहायकों का भी सुंदर विनियोग किया है । साथ ही समकालीन काव्य रूपों का भी सफलतापूर्वक निर्वाह किया गया है । समाजसुधार और धर्मोपदेश के लक्ष्य के कारण इनकी भाषा बोलचाल की है और व्यावहारिक दृष्टांतों से भरपूर है ।

सप्तम अध्याय को उपसंहार के रूप में रखा गया है । इस अध्याय के अंतर्गत करुणासागर और उनके ` कायम पंथ ` का समग्रतया मूल्यांकन करने का प्रयास किया गया है । परंपरा पर दृष्टिपात करते हुए यह देखने का प्रयत्न किया गया है कि करुणासागर उस परंपरा की एक अभिन्न और महत्त्वपूर्ण श्रृंखला हैं । ` कायम पंथ ` ने समाजसुधार के साथ ही आध्यात्मिक दर्शन को सर्वसुलभ बनाने में महत्त्वपूर्ण योगदान दिया है । करुणासागर का मुख्य लक्ष्य उक्त तथ्य था, अतः उनकी भाषा बोलचाल की होते हुए भी सधुक्कड़ी और ` संध्याभाषा ` थी । जीव, जगत और ईश्वर के निरूपण में इन्होंने यद्यपि समन्वय का सहारा लिया है, किन्तु फिर भी ज्ञानमार्गी होने की वजह से शांकर वेदांत और अजातवाद का प्रभाव अधिक दृष्टिगत होता है । इन दार्शनिक तथ्यों को जनसाधारण तक पहुँचाने के लिए करुणासागर ने विभिन्न दृष्टांतों एवं अलंकारों का प्रयोग भी किया है । इन्होंने तत्कालीन सभी प्रचलित काव्य प्रकारों को अपनाया है । इन्हीं तथ्यों का निरीक्षण-परीक्षण इस अध्याय में किया गया है ।

प्रस्तुत शोध प्रबंध डॉ. प्रतापनारायण झा के निर्देशन में लिखा गया है । इन्होंने अनुसंधान संबंधी अनेक गुत्थियों को सुलझाकर न केवल उचित मार्गदर्शन दिया है, अपितु हमेशा मित्रवत् प्रोत्साहन भी दिया है । अतः सर्व प्रथम मैं इनके एवं इनके परिवार के प्रति अपनी कृतज्ञता ज्ञापित करना अपना कर्तव्य समझता हूँ ।

इसे मैं अपना सौभाग्य ही समझता हूँ कि मेरे गुरुजन अद्यापि मेरे प्रति स्नेहधारा बहाते रहे हैं । महामहोपाध्याय श्री के. का. शास्त्री , डॉ. कुँवरचंद्र प्रकाश सिंह, डॉ. अंबाशंकर नागर, डॉ. अनंत जावड़ेकर , डॉ. अरुणोदय जानी, डॉ. सुरेश कांटावाला, स्व. डॉ. सुलोचना नाचणे , पू. हरिप्रसाद स्वामी , श्री नटवरलाल दलवाडी आदि विद्वानों ने मुझे संत साहित्य में प्रतिबिंबित दर्शन को समझने में बहुमूल्य सहायता की है । मैं इन गुरुजनों का हार्दिक आभार मानते हुए इन्हें वंदन करता हूँ ।

मित्रों की सदभावना ने मेरे पथ को और सुगम किया है । डॉ. रमण पाठक, डॉ. कांतिलाल शाह, डॉ. हर्षद त्रिवेदी, डॉ. सुभाष दवे , डॉ. देवदत्त जोशी, डॉ. पारुकांत देसाई , श्री अक्षयकुमार गोस्वामी , डॉ. एम. एच. सिद्दिकी, डॉ. भगवानदास कहार, डॉ. अशोक शाह आदि मित्रों के उचित एवं स्पष्ट सुझावों ने मेरे शोध पथ को एक नयी ऊर्जा प्रदान की है । इन मित्रों का मैं हार्दिक आभारी हूँ ।

डॉ. योगीन्द्र त्रिपाठी एवं इनके पुत्र डॉ. अनिलकुमार त्रिपाठी मेरे इस शोध कार्य के मूल स्त्रोत ही नहीं, वरन् सहृदय मार्गदर्शक भी रहे हैं । इन दोनों ने मुझे अपने पुस्तकालय में से आवश्यक पुस्तकें देकर अनुगृहीत किया है । डॉ. अनिल ने जीवन के अंतिम क्षण तक मुझे योग्य मार्गदर्शन दिया है । डॉ. त्रिपाठी के परिवार के प्रति मैं सदैव कृतज्ञ रहूँगा ।

` कायम पंथ ` के सप्तम कुवेराचार्य श्री अविचलदासजी ने करुणासागर के जीवन एवं सर्जन संबंधित अनेकविध जानकारी देकर हमें अनुगृहीत किया है । इनके उपरांत सारसा के बालुभाई पटेल, नरसिंहभाई पटेल, उमरा के करुणासागर मंदिर के ट्रस्टी श्री हरिभाई उमरीगर, करुणासागर मंदिर , सारसा के भूतपूर्व कोठारी श्री अमृतलाल दवे , इनके पुत्र हिरालाल दवे, बालकुबेर मंदिर विजयपुर के महंत श्री डाह्याभाई प्रजापति, करुणासागर मंदिर वडोदरा के महंतश्री , कायम पंथ के एकनिष्ठ सेवक श्री त्रिभुवन केसुरभाई पटेल आदि सांप्रदायिक विद्वानों ने करुणासागर के जीवन एवं कवन संबंधी मेरी जिज्ञासा को पूर्ण रीति से संतुष्ट किया है । मैं इन सभी सांप्रदायिक विद्वानों का आभारी हूँ ।

युनिवर्सिटी लायब्रेरी के ग्रंथपाल डॉ. एल. एम. पाध्या एवं इनके स्टाफ ने मुझे अनुसंधान कार्य में संपूर्ण सहयोग दिया है । मैं इन सबका कृतज्ञ हूँ ।

फेकल्टी ऑफ आर्ट्स के ऑफिस स्टाफ ने हमेशा मेरे प्रति सहानुभूति-पूर्ण रुख रखकर मुझे अनुगृहीत किया है ।

हिन्दी विभाग के अध्यक्ष डॉ. मदनगोपाल गुप्त ने मेरे अनुसंधान कार्य के लिए ठोस प्रशासकीय व्यवस्था न की होती तो शायद मेरा अनुसंधान कार्य मरुस्थल के सोते की तरह कहीं बीच में ही लुप्त हो जाता । मैं इनका हृदय से आभार मानता हूँ ।

अंत में श्रीमती निरंजना व्यास को मैं कैसे भुला सकता हूँ , जिसने अपनी अस्वस्थता के क्षणों में भी हमेशा मुझे प्यार भरा प्रोत्साहन दिया है और मेरे कार्य को गति दी है ।

यद्यपि टंकण संबंधी भूलों को यथा संभव सुधार दिया गया है, तथापि ` गोदरेज ` टंकणयंत्र की कुछ सीमाएं हैं , जिन्हें सुधीजन क्षमा करेंगे ।

2, अप्रैल 1982.
राम नवमी, वि.सं.2038

निवेदक,

(जशवंत के. व्यास)